4

बेरोजगारी

किसी भी देश के लिए बेरोजगारी की समस्या एक गंभीर तथा जटिल समस्या है। अल्पविकसित और विकासशील देशों में इसकी स्थिति आमतौर पर अधिक विस्फोटक होती है। विशेषकर ऐसे देशों में जहां जनसंख्या बहुत बड़ी है और तेजी से बढ़ रही है। भारत के साथ यह बात विशेष रूप से लागू होती है। भारत में बेरोजगारी गरीबी की तरह एक अभिशाप है। यह देश में व्यापक रूप से फैली हुई है और समय के साथ निरंतर यह बढ़ती भी रही है। वस्तुत: बेरोजगारी का भारत में व्यापक विस्तार है। कोई भी क्षेत्र या वर्ग इससे मुक्त नहीं है। यह गांवों में भी नजर आती है, और शहरों में भी। इसी प्रकार यह शिक्षित वर्गों के बीच भी देखने को मिलती है और अशिक्षित वर्गों के बीच भी। बेरोजगारी आर्थिक समस्या भी है और सामाजिक भी। आर्थिक और सामाजिक दोनों ही रूपों में इसके परिणाम बहुत गंभीर और घातक होते हैं। व्यापक बेरोजगारी की दशा में राष्ट्रीय उत्पादन की मात्रा कम हो जाती है जिसका पूंजी-निर्माण, व्यापार-व्यवसाय और प्रगति आदि पर बहुत प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। बेरोजगारी बढ़ने पर, आर्थिक कष्ट लोगों की संवेदना और परिवारिक जीवन पर बुरा प्रभाव डालते हैं। यहीं नहीं सामाजिक सुरक्षा के अभाव में बेरोजगार व्यक्ति प्राय: चोरी, डकैती, बेईमानी, शराब खोरी आदि बुराइयों के शिकार हो जाते हैं। मूल तथ्य यह है कि कोई व्यक्ति जो सिर्फ एक उपभोक्ता है, परंतु उत्पादक नहीं है वह एक अच्छा और जिम्मेदार नागरिक नहीं हो सकता। उत्पादक होने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति सामान्य अर्थ में कार्यरत हो या किसी के अधीन कार्य करें।

बेरोजगारी का अर्थ

जब हम 'बेरोजगार' शब्द का प्रयोग करते हैं तो हम उन व्यक्तियों की ओर संकेत करते हैं जो 15 से 64 वर्ष के आयु समूह में होते हैं। इस आयु समूह में आने वाले, जो कार्य करने की इच्छा व योग्यता रखते हों 'श्रम बल' कहलाते हैं। इसी आयु समूह के लोग जो रोजगार में लगे होते हैं अर्थात् रोजगार में लगे हुए श्रम बल को 'कार्य बल' कहते हैं। दूसरे शब्दों में श्रम बल (15-64) के अन्तर्गत आने वाला कोई व्यक्ति बेरोजगार तब माना जाता है जब वह प्रचलित मजदूरी पर काम करने की इच्छा एवं योग्यता रखता हो, किन्तु उसे काम नहीं मिलता, वह 'बेरोजगार' कहलाता है और यह स्थिति 'बेरोजगारी' कही जाती है।

कुछ लोग स्वेच्छा से बेरोजगार होते हैं। वे भिक्षा मांग कर अपना जीवन निर्वाह करते हैं या वे परजीवी जीवन को प्राथमिकता देते हैं, ऐसे लोगों को बेरोजगारों में शामिल नहीं किया जाता। उन्हें भी बेरोजगारों में शामिल नहीं किया जाता जो केवल काम की इच्छा रखते हैं, पर उनमें योग्यता का अभाव होता है।

बेरोजगारी का स्वरूप

भारत एक विकासशील किन्तु अल्पविकसित देश है, इस कारण यहाँ बेरोजगारी का स्वरूप औद्योगिक दृष्टि से उन्नत राष्ट्रों से भिन्न है। भारत में बेरोजगारी का स्वरूप संरचनात्मक किस्म की है। यह देश के पिछड़े आर्थिक ढांचे के साथ सम्बन्धित है और इस कारण यह दीर्घकालिक और स्थायी है। इसका अर्थ है कि देश में श्रमिकों की संख्या की तुलना में रोजगार की मात्रा न केवल कम है, बल्कि यह कमी देश की अल्पविकसित अर्थव्यवस्था के साथ गहरे तौर पर जुड़ी हुई है। चूँकि देश में पूंजी-निर्माण की दर नीची है, इसलिए रोजगार की मात्रा भी कम है। जो थोड़ा बहुत काम-धन्धा है और जिसमें अधिकांश लोग लगे हुए हैं, वह इतना काफी नहीं है कि सबको उनकी क्षमता के अनुसार काम मिल सके।

अल्पविकास के सन्दर्भ में जब काम-काज या नौकरियां उतनी रहती हैं अथवा उनमें नाममात्र की वृद्धि होती है, तब रोजगार की मात्रा लगभग स्थिर रहती है और वह भी निम्न-स्तर पर क्योंकि हर व्यक्ति को पूरा काम नहीं मिल पाता। दूसरी ओर श्रमिकों की संख्या उपलब्ध रोजगार के अवसरों से न केवल अधिक होती है, बल्कि वर्धमान जनसंख्या के कारण तेजी से बढ़ती रहती है। स्पष्ट है कि भारत में बेरोजगारी स्थायी या दीर्घकालिक है। इस दृष्टि से भारत में बेरोजगारी का मूल हल तेजी से आर्थिक विकास द्वारा ही संभव है।

लार्ड केन्स के विश्लेषण के अनुसार विकसित देशों में बेरोजगारी का मूल कारण समर्थ मांग का अभाव है। इसका अर्थ यह है कि ऐसी अर्थव्यवस्थाओं में मशीनें बेकार हो जाती हैं और श्रम की मांग उद्योगों के उत्पादन की मांग कम हो जाने के कारण गिर जाती हैं। लेकिन यहाँ यह उल्लेख करना उपयुक्त होगा कि अल्पविकसित देशों में केन्स के विचारों के अनुसार बेरोजगारी समर्थ मांग के अभाव से उत्पन्न नहीं होती बल्कि यह पूंजी या अन्य अनुपूरक साधनों के अभाव का परिणाम होती है। विकसित देशों में बेरोजगारी की भिन्नता को ध्यान में रखते हुए संक्षेप में देश में बेरोजगारी के स्वरूप को इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है। "भारत में बेरोजगारी व्यापक रूप से फैली हुई है और इसका स्वरूप दीर्घकालिक है।" मूल रूप से यहाँ की बेरोजगारी आपूर्ति-पक्ष के साथ जुड़ी हुई है और इसका सम्बन्ध देश में पर्याप्त उत्पादन-क्षमता, विशेष रूप में पूंजी के अभाव के साथ है। अत: भारत जैसे अल्पविकसित देशों में बेरोजगारी के समाधान के लिए पूंजीगत वस्तुओं के स्टॉक को बढ़ाना अनिवार्य है ताकि उत्पादन की नई इकाईयां स्थापित कर रोजगार के अवसरों का सृजन किया जा सके। वस्तुत: रोजगार के अवसरों के सृजन का प्रश्न मूलत: पूंजी निर्माण की दर को तीव्रतर करने एवं उत्पादन क्षमता को बढ़ाने से जुड़ा हुआ है।

बेरोजगारी के प्रकार

मूलत: भारत में बेरोजगारी का स्वरूप संरचनात्मक है किन्तु यह विभिन्न रूपों में देखने को मिलती है। भारत में बेरोजगारी के विभिन्न रूपों का विवरण इस प्रकार है-

- **प्रच्छन्न बेरोजगारी** : रेग्नर नर्क्स और आर्थर ल्युइस ने प्रच्छन्न बरोजगारी की अवधारणा का विकास कृषि-प्रधान देशों के सन्दर्भ में किया है। इनका मानना है कि कृषि प्रधान देशों में जितने भी लोग कृषि कार्यों में लगे होते हैं उन सभी का उत्पादन स्तर बनाये रखने के लिये इस व्यवसाय में लगा रहना आवश्यक नहीं है। इस प्रकार

की बेरोजगारी अधिकतर ग्रामीण क्षेत्रों में देखने को मिलती हैं यहाँ सभी लोग ऊपरी तौर पर कृषि कार्य में लगे दिखाई देते हैं, लेकिन वास्तव में सब लोगों के लिए पर्याप्त मात्रा में कृषि-क्षेत्र में कार्य नहीं जुट पाता। चूँकि इस प्रकार के लोगों की खेती में उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति का उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसीलिए ऐसे लोग उत्पादन स्तर को बनाए रखने के लिए अनावश्यक या फालतू होते हैं। यही फालतू या अनावश्यक श्रम जिसकी कृषि क्षेत्र में सीमांत उत्पादकता शून्य होती है, 'प्रच्छन्न बेरोजगारी' कहलाती है।

- **अल्प-रोजगार** : इसके अंतर्गत ऐसे श्रमिक आते हैं जिनको थोड़ा-बहुत काम मिलता है और जिनके द्वारा वे थोड़ा-बहुत उत्पादन में योगदान तो करते हैं, लेकिन जिनको अपनी क्षमतानुसार काम नहीं मिलता या पूरा काम नहीं मिलता। उदाहरण स्वरूप एक इन्जीनियर द्वारा दफ्तर के साधारण क्लर्क का कार्य किया जाना।

  ऐसे श्रमिक उत्पादन में योगदान तो करते हैं, लेकिन उतना नहीं जितना कि वे कर सकते हैं। इसमें कृषि में लगे श्रमिक भी आते हैं, जिन्हें करने के लिए कम काम मिलता है। शहरों में भी ऐसे लोग होते हैं जो कुछ-न-कुछ काम करते हैं और उत्पादन कार्य में हाथ बंटाते हैं, लेकिन काम कम होने के कारण पूरी तरह रोजगार में लगे नहीं समझे जा सकते। इस प्रकार की स्थिति 'अल्परोजगार' स्थिति कहलाती है।

- **मौसमी बेरोजगारी** : कृषि क्षेत्र में लगे बहुत से श्रमिक ऐसे होते हैं, जिन्हें पूरे वर्ष काम नहीं मिलता। इसका कारण यह है कि कृषि एक मौसमी व्यवसाय है अर्थात्, कृषि में मौसम के अनुसार फसलें बोई और काटी जाती हैं। खाली मौसम में अक्सर कृषि में काम करने वाले कृषक और श्रमिक बेकार बैठे रहते हैं। जैसे फसल की कटाई के बाद और बुवाई से पहले। दूसरे शब्दों में, भारत में बहुत से कृषकों को वर्ष में कुछ समय ही काम मिल पाता है और शेष समय में वे बिल्कुल बेकार हो जाते हैं। इस प्रकार की बेरोजगारी को मौसमी बेरोजगारी कहा जाता है।

- **खुली बेरोजगारी** : 'खुली बेरोजगारी' वह स्थिति है जिसमें यद्यपि श्रमिक काम करने के लिए तैयार होता है तथा उसमें काम करने की योग्यता भी होती है, परन्तु उसे काम नहीं मिलता है। इस प्रकार की बेरोजगारी खेतीहर मजदूरों में, शिक्षित व्यक्तियों में तथा उन लोगों में पायी जाती है जो गांवों से शहरों में काम पाने के लिए आते हैं, परंतु काम नहीं मिल पाने के कारण बेरोजगार पड़े रहते हैं। भारत में खुली बेरोजगारी काफी मात्रा में है।

- **शिक्षित बेरोजगारी** : शिक्षित बेरोजगार ऐसे श्रमिक हैं जिनके शिक्षण-प्रशिक्षण में बड़ी मात्रा में संसाधन इस्तेमाल किये जाते हैं और उनकी काम करने की क्षमता दूसरे श्रमिकों से अधिक होती है। किन्तु उनको अपनी योग्यतानुसार कार्य नहीं मिलता और वे बेरोजगार हो जाते हैं। भारत में शिक्षित बेरोजगारी एक गंभीर समस्या है। इसके कई कारण हैं-

  (i) स्वतंत्रता के पश्चात देश में शिक्षण संस्थाओं जैसे विश्वविद्यालय, कॉलेजों, स्कूलों आदि की संख्या में वृद्धि होने के कारण शिक्षित लोगों की संख्या में काफी अधिक वृद्धि हो गई।

  (ii) भारत में शिक्षा, व्यवसाय प्रेरक नहीं है। इसलिए शिक्षित लोग कई व्यवसायों के लिए अनुपयुक्त होते हैं।

  (iii) भारत में रोजगार के अवसरों में उतनी वृद्धि नहीं हुई है।

- **औद्योगिक बेरोजगारी :** इसके अंतर्गत उन व्यक्तियों को शामिल किया जाता है जो उद्योगों, खनिज, यातायात, व्यापार निर्माण आदि व्यवसायों में काम करने के इच्छुक हैं, किन्तु उन्हें काम नहीं मिल पाता। इसका कारण यह है कि भारत में जनसंख्या की तीव्र वृद्धि हुई है और भारत में अभी इतने उद्योग स्थापित नहीं हुए हैं कि इस सारी बढ़ी हुई श्रम शक्ति को रोजगार उपलब्ध करा सके। इसके अतिरिक्त उद्योगों की वृद्धि के कारण बेरोजगार लोग शहरों की ओर उन्मुख हुए हैं। अत: सबको रोजगार के अवसर प्राप्त न होने के कारण औद्योगिक क्षेत्र में बेरोजगारी की मात्रा में वृद्धि होती है।
- **चक्रीय बेरोजगारी :** इसका सम्बन्ध आर्थिक गतिविधियों में चक्रीय परिवर्तनों से है। मन्दी की चक्रीय अवस्था के दौरान बेरोजगारी की अधिक मात्रा हो सकती है। यह बेरोजगारी व्यापार-चक्र के उस चरण से उत्पन्न होती है, जबकि व्यापार क्षेत्र में मन्दी की स्थिति आती है। मांग में कमी इसका मुख्य कारण है।
- **संरचनात्मक बेरोजगारी :** 'संरचनात्मक बेरोजगारी' वह स्थिति है जो देश की आर्थिक संरचना में परिवर्तन होने के कारण उत्पन्न होती है। विशेषकर (i) प्रौद्योगिकी में परिवर्तन तथा (ii) मांग के प्रतिमान में परिवर्तन से सम्बन्धित।
- **संघर्षात्मक बेरोजगारी :** यह श्रमिकों की गतिशीलता में बाधा के कारण उत्पन्न होती है। वर्ष में कुछ समय के लिये श्रमिक बेरोजगार हो सकते हैं क्योंकि एक काम से दूसरे काम में जाने में समय लगता है। इसे 'संघर्षात्मक बेरोजगारी' कहा जाता है।

बेरोजगारी की अवधारणाएं

भारत में बेरोजगारी का अनुमान लगाने के लिए योजना आयोग एवं राष्ट्रीय सेम्पल सर्वेक्षण संगठन द्वारा जिन अवधारणाओं का इस्तेमाल किया जाता है, वे निम्नलिखित हैं-

- **सामान्य स्थिति बेरोजगारी :** सामान्य स्थिति बेरोजगारी का अभिप्राय लोगों की उस संख्या से है जो वर्ष के अधिकांश भाग में काम की तलाश में रहते हैं, पर उन्हें काम नहीं मिल पाता।

  दूसरे शब्दों में, सामान्य स्थिति बेरोजगारी एक व्यक्ति दर है जो दीर्घकालीन बेरोजगारी दिखलाती है क्योंकि सन्दर्भ वर्ष में जितने लोग भी सामान्यतया बेरोजगार होते हैं, उन्हें बेरोजगारों में शामिल कर लिया जाता है। वस्तुत: सामान्य स्थिति बेरोजगारी दर एक व्यक्ति दर है।
- **साप्ताहिक स्थिति बेरोजगारी :** यह बेरोजगारी की साप्ताहिक स्थिति से संबद्ध है। इसके द्वारा किसी व्यक्ति की सर्वेक्षण के पूर्व सप्ताह अथवा अनुबन्धित सप्ताह (सर्वेक्षण के बाद के सात दिन) में रोजगार बेरोजगार की स्थिति का पता लगाया जाता है। उपरोक्त सप्ताहों में यदि व्यक्ति कार्य बल से संबद्ध नहीं पाया जाता है तो उसे बेरोजगार घोषित कर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, साप्ताहिक स्थिति बेरोजगारी की अवधारणा का अभिप्राय पिछले सात दिनों अथवा सर्वेक्षण के अगले सप्ताह में किसी व्यक्ति के कार्य बल के संबद्ध होने या न होने से है यदि उपरोक्त सात दिनों में कोई व्यक्ति एक घंटा भी काम प्राप्त कर सकने में समर्थ रहता है तो उसे रोजगार मान लिया जाता

है अन्यथा उसे बेरोजगार की श्रेणी में रखा जाता है। यह सामान्य स्थिति बेरोजगारी दर की तरह ही व्यक्ति दर है।

- **दैनिक स्थिति बेरोजगारी :** दैनिक स्थिति बेरोजगारी की अवधारणा के द्वारा रोजगार/बेरोजगार के प्रतिदिन स्तर का अनुमान व्यक्ति दिवसों के रूप में लगाया जाता है। इस अवधारणा के अनुसार पिछले सात दिनों में व्यक्ति की कार्य स्थिति पर गौर किया जाता है। यदि इन सात दिनों में कोई व्यक्ति किसी भी दिन 'एक घंटे से अधिक और चार घंटे से कम' काम करता है तो उसे आधे दिन कार्यरत माना जाता है तथा चार घंटे से अधिक काम करने पर व्यक्ति को पूरे दिन कार्यरत माना जाता है। दैनिक स्थिति बेरोजगारी दर एक समय दर है।

मूल्यांकन

इन अवधारणाओं में से दैनिक स्थिति बेरोजगारी बेरोजगारी का सर्वोत्तम माप प्रस्तुत करती है। इसका कारण यह है कि इसमें खुली तथा आंशिक सभी प्रकार की बेरोजगारी शामिल हो जाती है। इसलिए नीति निर्धारण के दृष्टिकोण से इसका सबसे अधिक महत्व है। इसमें त्रुटि होने की संभावना कम होती है। इसके विपरीत, साप्ताहिक स्थिति बेरोजगारी को सम्पूर्ण सप्ताह में बेरोजगार रहने वाले श्रमिकों के अनुपात का तथा सामान्य स्थिति बेरोजगारी को दीर्घकालिक बेरोजगारी का मात्र एक मोटा अनुमान ही माना जा सकता है। भारत में दीर्घकालिक बेरोजगारी की समस्या उतनी गंभीर नहीं हैं जितनी की अल्परोजगार की समस्या। इसके अलावा अल्प रोजगार की परिस्थितियों में से गुजरने वाले लोगों की संरचना में भी परिवर्तन होते रहते हैं।

भारत में बेरोजगारी की प्रवृत्तियां

आर्थिक विकास के आरंभिक चरण में आर्थिक प्रगति के उद्देश्य तथा रोजगार के उद्देश्य में परस्पर विरोध होता है। परन्तु भारत में योजना आयोग ने इस परस्पर-विरोध की अनदेखी करते हुए यह मान्यता ली कि संवृद्धि से बेरोजगारी की समस्या का हल स्वत: हो जाएगा, परंतु ऐसा हुआ नहीं। हाल के वर्षों में आर्थिक संवृद्धि में तेजी के बावजूद भारत में रोजगार की गति में गिरावट आई है। आर्थिक सुधारों की अवधि में बेरोजगारी तेजी से बढ़ी है। इसे तालिका से स्पष्ट किया जा सकता है। पूरे देश के लिए चालू दैनिक स्थिति के आधार पर बेरोजगारी के प्राप्त अनुमानों से यह स्पष्ट होता है कि आर्थिक सुधारों की अवधि में जनसंख्या के सभी चार वर्गों ग्रामीण पुरूषों, ग्रामीण स्त्रियों, शहरी पुरूषों तथा शहरी स्त्रियों के लिए बेरोजगारी में सबसे अधिक वृद्धि ग्रामीण स्त्रियों के वर्ग के लिए हुई है- 1993-94 में इनके लिए बेरोजगारी दर 56 प्रति हजार थी जो 2004-05 में बढ़कर 87 प्रति हजार हो गई। पुरूषों की बेरोजगारी दर 1993-94 में 56 प्रति हजार से बढ़कर 2004-05 में 80 प्रति हजार हो गई।

11वीं पंचवर्षीय योजना के दौरान कुल श्रमिक बल के अनुमानित वृद्धि 45 मिलियन आंकी गई है। यह भी अनुमान लगाया गया है कि 11वीं पंचवर्षीय योजना में रोजगार के 58 मिलियन अवसर पैदा किये जायेंगे। यह श्रमिक बल में अनुमानित वृद्धि से अधिक होगा जिससे बेरोजगारी दर में कमी होगी और यह योजना के अंतिम वर्ष तक 5 प्रतिशत से कम हो जायेगी। यह संभावना है कि 11वीं पंचवर्षीय योजनावधि के दौरान कृषि क्षेत्र में मौजूद अधिशेष श्रम-बल

को कृषि भिन्न क्षेत्र से अधिक मजदूरी और अधिक लाभकर रोजगार की ओर बढ़ाने पर आधारित है। वित्त वर्ष 2008-09 में रोजगार के अवसर वैश्विक वित्तीय संकट और भारत के प्रमुख बाजारों में व्याप्त आर्थिक मंदी से प्रभावित हुए हैं। वैसे चालू वित्त वर्ष में विस्तृत रोजगार आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, कुछ नमूना सर्वेक्षणों में वैश्विक वित्तीय संकट और आर्थिक मंदी के कारण हुई रोजगार क्षति इंगित की गई है।

आर्थिक सुधारों की अवधि में भारत में बेरोजगारी बढ़ने का मुख्य कारण आर्थिक संवृद्धि का अधिकतर रोजगार विहीन होना रहा है। इस अवधि में बेरोजगारी दरों के बारे में मुख्य बातें निम्नलिखित हैं-

बेरोजगारी दरें (प्रति 1000)

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण दौर	ग्रामीण पुरूष			ग्रामीण स्त्रियां		
	US	CWS	CDS	VS	CWS	DS
1993-94 (50 वाँ दौर)	20	30	56	14	30	56
1999-2000 (55 वाँ गैर)	21	39	72	15	37	70
2004-05 (61 वाँ दौर)	21	38	80	31	42	82
राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण दौर	**शहरी पुरूष**			**शहरी स्त्रियां**		
	US	CWS	CDS	VS	CWS	DS
1993-94 (50 वाँ दौर)	45	52	67	83	84	105
1999-2000 (55 वाँ दौर)	48	56	73	71	37	94
2004-05(61 वाँ दौर)	44	52	75	91	90	116

नोट : US (Usual status) : सामान्य स्थिति; CWS (Current Weekly status) : चालू साप्ताहिक स्थिति; CDS (Current Daily status) : चालू दैनिक स्थिति।

- 1993-94 से 2004-05 के बीच बेरोजगारी दर में वृद्धि हुई है। चालू दैनिक स्थिति के आधार पर, विचाराधीन अवधि में, पुरूषों के लिए बेरोजगारी दर ग्रामीण क्षेत्रों में 5.6 प्रतिशत से बढ़कर 8.0 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 6.7 प्रतिशत से बढ़कर 7.5 प्रतिशत हो गई।
- इसी प्रकार, स्त्रियों के लिए बेरोजगारी दर ग्रामीण क्षेत्रों में 1993-94 में 5.6 प्रतिशत से बढ़कर 2004-05 में 8.7 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 10.5 प्रतिशत से बढ़कर 11.6 प्रतिशत हो गई।
- इसके अलावा, चालू दैनिक स्थिति के आधार पर बेरोजगारी दरें सामान्य स्थिति के आधार पर बेरोजगारी दरों से बहुत अधिक थी। यह इस बात का द्योतक है कि बीच-बीच में बेरोजगारी अत्यधिक है। (अर्थात पूरे वर्ष काम नहीं मिलता)।

- 1993-94 में पुरूषों तथा स्त्रियों दोनों के लिए शहरी बेरोजगारी दरें (चालू दैनिक स्थिति के आधार पर) ग्रामीण बेरोजगारी दरों की तुलना में अधिक थी। परन्तु 2004-05 में, पुरूषों के लिए ग्रामीण बेरोजगारी दरें, शहरी बेरोजगारी दरों की तुलना में अधिक थी।
- 1993-94 में शहरी स्त्रियों में बेरोजगारी दर 10.5 थी जो 1999-2000 में कम होकर 9.4 प्रतिशत रह गई, परन्तु उसके बाद मात्र पांच वर्षों 2004-05 में बढ़कर 11.6 प्रतिशत हो गई।
- सामान्य स्थिति बेरोजगारी दर और दैनिक स्थिति बेरोजगारी दर में 1994 से 2000 तथा 2000 से 2005 की अवधि के बीच अंतर बढ़ गए हैं- 1993-94 में सामान्य स्थिति बेरोजगारी दर 2.18 तथा दैनिक स्थिति बेरोजगारी दर 6.38 थी, 1999-2000 में यह दरें क्रमश: 2.48 तथा 7.58 तथा 2004-05 में क्रमश: 2.60 तथा 8.54 थीं। सामान्य स्थिति बेरोजगारी दर और दैनिक स्थिति बेरोजगारी दर में ये बढ़ते हुए अंतर इस बात का संकेत हैं कि अल्परोजगार में वृद्धि हो रही है।
- विभिन्न राज्यों में बेरोजगारी दरों में व्यापक अन्तर है। जिन राज्यों में श्रमिकों की मजबूत, सौदाकारी शक्ति के कारण या सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था के कारण पड़ोसी राज्यों की तुलना में ज्यादा मजदूरी दरें हैं, उन पर सामान्यतया बेरोजगारी की व्यापकता ज्यादा है।

विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार की स्थिति

मौटे तौर पर अर्थव्यवस्था को तीन क्षेत्रों में बाँटा जाता है- प्राथमिक क्षेत्र, द्वितीयक क्षेत्र तथा तृतीयक क्षेत्र। कृषि व उससे संबद्ध व्यवसायों को प्राथमिक क्षेत्र में शामिल किया जाता है। द्वितीयक क्षेत्र में विनिर्माण, बिजली, गैस, जल आपूर्ति आदि को शामिल किया जाता है। तृतीयक क्षेत्र में व्यापार, परिवहन, संचार तथा सामुदायिक-सामाजिक-निजी सेवाओं को सम्मिलित किया जाता है।

रोजगार के प्रमुख चार क्षेत्रों- कृषि, विनिर्माण, व्यापार तथा सामुदायिक-सामाजिक-निजी सेवाओं का 2004-2005 में रोजगार का कुल हिस्सा 86.82 प्रतिशत था। खनन, बिजली, गैस व जल आपूर्ति, निर्माण, परिवहन, भंडारण व संचार तथा वित्तीय क्षेत्रों में ज्यादा श्रम शक्ति काम नहीं करती। 2004-05 में इन सब गतिविधियों में कुल मिलाकर केवल 13.18 प्रतिशत श्रम शक्ति कार्यरत थी। तालिका में दिए गये आँकड़ों से विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार की स्थिति को स्पष्ट किया जा सकता है-

- 1993-94 से 2004-05 के बीच कृषि क्षेत्र में क्रमश: गिरावट देखने को मिलती है। फिर भी कृषि क्षेत्र सबसे बड़ा रोजगार व्यवसाय होने का अपना वर्चस्व बनाए रखा है। इस क्षेत्र में 2004-05 में श्रम शक्ति का 52.06 प्रतिशत कार्यरत था।
- द्वितीयक क्षेत्र में विनिर्माण क्षेत्र को छोड़कर अन्य क्षेत्रों में रोजगार में कमी देखी गयी है। विनिर्माण क्षेत्र में कार्यरत लोगों की संख्या 1993-94 में 4 करोड़ 25 लाख थी जो 1999-2000 में बढ़कर 4 करोड़ 80 लाख हो गई।

- 1993-94 में व्यापार में श्रम शक्ति की 8.26 प्रतिशत कार्यरत का जो 2004-05 में बढ़कर 12.62 प्रतिशत हो गया। व्यापार क्षेत्र में सर्वाधिक वृद्धि देखने को मिलती है।
- 1999-2000 में सामुदायिक, सामाजिक एवं निजी क्षेत्र में श्रम शक्ति का 10.50 प्रतिशत कार्यरत था जो 2004-05 में घटकर 9.24 प्रतिशत कम हो गया।

विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार की स्थिति (दैनिक स्थिति के आधार पर)

व्यवसाय	(प्रतिशत में)		
	1993-94	1999-2000	2004-05
कृषि	61.03	56.64	52.06
खनन	0.78	0.67	0.63
विनिर्माण	11.10	12.13	12.90
बिजली, गैस, जल आपूर्ति	0.41	0.34	0.35
निर्माण	3.63	4.44	5.57
व्यापार	8.26	11.20	12.62
परिवहन, भंडारण एवं संचार	3.22	4.06	4.61
वित्तीय सेवाएं	1.08	1.36	2.00
सामुदायिक, सामाजिक एवं निजी सेवायें	10.50	9.16	9.24
कुल	100.00	100.00	100.00

संगठित और असंगठित क्षेत्रों में रोजगार

भारतीय अर्थव्यवस्था में एक आय विभाजन भी किया जाता है, जिसे संगठित और असंगठित क्षेत्र कहा जाता है। मोटे तौर पर संगठित क्षेत्र में विनिर्माण, बिजली, परिवहन तथा वित्तीय सेवाएं शामिल हैं। किन्तु असंगठित क्षेत्र बहुत बड़ा है। वस्तुतः सम्पूर्ण कृषि एवं उससे संबद्ध क्षेत्र असंगठित क्षेत्र है।

राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे संगठन (NSSO) 1999-2000 में कराए गए सर्वेक्षण के अनुसार, देश में संगठित और असंगठित, दोनों ही क्षेत्रों में श्रमिकों की कुल संख्या 39.7 करोड़ थी। इनसे में 2.8 करोड़ संगठित क्षेत्र में थे और बाकी 36.9 करोड़ यानी कुल रोजगार का 93% असंगठित क्षेत्र में थे। असंगठित क्षेत्र के 36.9 करोड़ श्रमिकों में से 23.7 करोड़ कृषि क्षेत्र में लगे थे, जबकि 1.7 करोड़ श्रमिक निर्माण क्षेत्र में, 4.1 करोड़ श्रमिक विनिर्माण गतिविधियों में और व्यापार में 3.7 करोड़ लोग संलग्न थे, इसके अलावा परिवहन और संचार सेवाओं के क्षेत्र में 3.7 करोड़ लोग लगे हुए थे।

राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन द्वारा 2004-05 के सर्वेक्षण के अनुसार 45.9 करोड़ कुल श्रमिकों में 43.3 करोड़ अर्थात् 94.44 प्रतिशत श्रमिक असंगठित क्षेत्र में लगे थे। असंगठित क्षेत्र में लगे 43.3 करोड़ श्रमिकों में 26.8 करोड़ अर्थात् 64 प्रतिशत श्रमिक कृषि क्षेत्र में लगे थे।

संगठित क्षेत्र सार्वजनिक क्षेत्र और निजी क्षेत्र में बंटा है। निजी क्षेत्र ने हमेशा संगठित क्षेत्र में कार्यरत लोगों के एक तिहाई से कम को रोजगार प्रदान किया है। सरकार ने रोजगार सृजन के लिए निजी क्षेत्र पर जो विश्वास प्रकट किया है वह सही नहीं है। अब यह बात सिद्ध हो गई है कि लाभ को अधिकतम करने की होड़ में लगा निजी निगम क्षेत्र कभी भी उस मात्रा में रोजगार सृजन नहीं करेगा जिस मात्रा में पहले सार्वजनिक क्षेत्र करता रहा है। अब संगठित क्षेत्र में रोजगार वृद्धि निजी क्षेत्र में रोजगार वृद्धि पर निर्भर है। सरकार ने स्वीकार किया है कि निजी क्षेत्र में रोजगार वृद्धि, सार्वजनिक क्षेत्र में होने वाली रोजगार में गिरावट की भारपाई कर पाने में असमर्थ रही है। आर्थिक समीक्षा, 2007-08 के अनुसार संगठित क्षेत्र (सार्वजनिक व निजी क्षेत्र) में रोजगार वृद्धि में 1994 से 2006 के बीच गिरावट हुई है। संगठित क्षेत्र में जहाँ 1983 से 1993-94 के बीच रोजगार वृद्धि की दर 1.20 प्रतिशत की प्रतिवर्ष थी, वहाँ 1994 से 2006 के बीच 0.12 प्रतिशत हो गई। यह रोजगार वृद्धि की ऋणात्मकता का प्रदर्शित करता है।

असंगठित क्षेत्र से तात्पर्य उन श्रमिकों से है, जो रोजगार के अस्थायी स्वरूप, अज्ञानता और निरक्षरता, छोटे तथा बिखरे प्रतिष्ठानों आदि कुछ कारण से अपने साझा हितों के लिए स्वयं को संगठित नहीं कर पाए। असंगठित क्षेत्र के मजदूरों की सामाजिक सुरक्षा और कल्याण की देख-रेख के लिए सरकार ने विधायी उपायों तथा कल्याण योजनाओं और कार्यक्रमों की द्विस्तरीय नीति अपनाई है। इसके अतिरिक्त सरकार असंगठित क्षेत्र की समस्याओं के समाधान के लिए 2004 में डॉ. अर्जन सेन गुप्ता की अध्यक्षता में एक राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की है। आयोग असंगठित क्षेत्र के उद्यमों में काम करने वाले श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा प्रणाली की समीक्षा करता है।

राष्ट्रीय असंगठित क्षेत्र उद्यम आयोग के अनुसार, रोजगार और बेरोजगारी के संबंध में एनएसएस के 55वें दौर के आंकड़ों के आधार पर देश में 1999-2000 के दौरान कुल अनुमानित रोजगार 396.8 मिलियन था और उनमें से अनौपचारिक क्षेत्र के कर्मचारियों की संख्या 342.6 मिलियन थी। 61वें दौर के सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2004-05 के दौरान कुल रोजगार और अनौपचारिक क्षेत्र के कर्मचारियों के रोजगार क्रमश: 457.5 मिलियन और 394.9 मिलियन होने का अनुमान लगाया गया था।

वी. वी. गिरी राष्ट्रीय श्रम संस्थान, नोएडा (उत्तर प्रदेश) में स्थित है। यह एक स्वायत्त संस्था है जो संगठित एवं असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों से संबंधित मामलों और समस्याओं पर अनुसंधान करने के लिए जाना जाता है। संस्थान ने बाल मजदूर, महिला श्रम, ग्रामीण श्रम आदि पर अपना ध्यान केन्द्रित किया है।

बेरोजगारी के कारण

भारत में बेरोजगारी की स्थिति अत्यंत गंभीर है। यह विकास को अवरूद्ध करता है। इस समस्या के समाधान के लिए इसके कारणों को जान लेना आवश्यक है। भारत में बढ़ती हुई बेरोजगारी के मुख्य कारण निम्नलिखित हैं-

- **धीमा आर्थिक विकास :** भारत की अर्थव्यवस्था अर्द्धविकसित है और यहाँ आर्थिक विकास की नीति भी धीमी रही है। इसलिए बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए धीमा आर्थिक विकास रोजगार के अधिक अवसर उपलब्ध कराने में अक्षम सिद्ध होता है। अत: उपलब्ध रोजगार की तुलना में यहाँ श्रम की आपूर्ति अधिक रहा है।
- **जनसंख्या में तीव्र वृद्धि :** स्वतंत्रता के बाद से ही जनसंख्या में तीव्र वृद्धि भारत के लिए समस्या बनी हुई है। जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि बेरोजगारी का मुख्य कारण है। यही कारण है कि दस पंचवर्षीय योजनाओं के समाप्त हो जाने के बाद भी बेरोजगारी की संख्या घटी नहीं, बल्कि बढ़ी है।
- **कम बचत तथा निवेश :** भारत एक अल्पविकसित देश है, यहाँ पूँजी का अभाव है। जो थोड़ी बहुत पूँजी है भी उसका निवेश ठीक प्रकार से नहीं किया गया है। निवेश बचत पर निर्भर करता है। यहाँ पर बचतें भी कम हैं। इसलिए बचत और निवेश में कमी के कारण श्रमिकों के लिए रोजगार के पर्याप्त अवसर पैदा नहीं किये जा सके हैं।
- **कृषि एक मौसमी व्यवसाय :** भारत में कृषि अविकसित ही नहीं, अपितु यह एक मौसमी काम धन्धा देने वाला व्यवसाय है। नि:संदेह कृषि देश का मुख्य व्यवसाय है और उस पर देश की अधिकांश जनसंख्या निर्भर है। परन्तु इसकी मौसमी विशेषता होने के कारण किसानों को पूरे वर्ष काम नहीं दे पाती और इसीलिए कृषि में भी काफी व्यक्ति तीन महीने तक खाली बैठे रहते हैं।
- **कुटीर और लघु उद्योगों का पतन :** औपनिवेशिक काल में अंग्रेजों ने भारत में जो औद्योगिक नीति अपनायी थी, उससे लघु एवं कुटीर उद्योगों में काम करने वाले कारीगरों को बहुत धक्का पहुँचा था। जो वस्तुएं इन उद्योगों में पैदा होती थीं वे वस्तुएं बड़े उद्योगों द्वारा बड़े पैमाने पर उत्पादित किये जाने लगे; जिससे कुटीर और लघु उद्योगों में लगे कारीगरों के समक्ष रोजगार संकट उत्पन्न हो गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने उद्योगों को उन्नत करने का काफी प्रयास किया है, किन्तु आज भी कुटीर और लघु उद्योगों से संबद्ध कारीगर बेरोजगार हैं।
- **संयुक्त परिवार प्रणाली :** संयुक्त परिवार प्रणाली भी बेरोजगारी को बढ़ावा देती है। संयुक्त परिवारों में काफी ऐसे व्यक्ति मिल जायेंगे जो वास्तव में कुछ भी काम नहीं करते पर परिवार की संयुक्त आय पर अपना निर्वाह करते हैं। हालाँकि कुछ वर्षों से संयुक्त परिवारों के टूटने की प्रवृत्ति देखी जा रही है। इसके टुटने से कुछ व्यक्ति तो काम प्राप्त कर सके हैं, पर अब भी ऐसे मिलेंगे जो रोजगार की तलाश में इधर-उधर भटक रहे हैं।
- **नई तकनीकों का प्रयोग :** उदारीकरण के बाद उद्योगों में नई तकनीकों के प्रयोग में तेजी आयी है जिससे रोजगार पर प्रभाव पड़ा है। नए यंत्रों एवं कम्प्यूटरों के प्रयोग ने रोजगार के अवसरों को प्रभावित किया है। इससे भारत में बेरोजगारी बढ़ी है।
- **शिक्षा प्रणाली में दोष :** भारत की शिक्षा प्रणाली दोषपूर्ण है। वास्तव में यह शिक्षा प्रणाली वही है जिसकी औपनिवेशिक काल में मैकाले ने शुरूआत की थी। यहाँ की शिक्षा प्रणाली सरकार और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों के लिए सिर्फ क्लर्क और नीचे दर्जे के प्रशासनिक अफसर पैदा कर सकती है। इस प्रकार की शिक्षा रोजगार नहीं प्रदान कर सकती। मिर्डल के अनुसार, ये लोग न केवल अल्पशिक्षित हैं बल्कि सच पूछा जाए तो इनकी शिक्षा गलत प्रकार की है। अभिप्राय यह है कि यदि भारत में शिक्षित लोगों की बेरोजगारी कम करनी है तो उसके लिए शिक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण परिवर्तन करने होंगे।

बेरोजगारी के आर्थिक और सामाजिक परिणाम

आर्थिक परिणाम

- **मानव शक्ति का अप्रयोग** - जिस सीमा तक देश में लोग बेरोजगार रहते हैं, उस सीमा तक देश में मानवीय साधनों का प्रयोग नहीं हो पाता। यह समाज के लिए एक प्रकार से अपव्यय है।
- **उत्पादन की हानि** - जिस सीमा तक मानव शक्ति प्रयोग नहीं हो पाता, उस सीमा तक उत्पादन की भी हानि होती है। बेरोजगार व्यक्ति केवल उपभोक्ता की तरह जीते हैं उत्पादकों की तरह नहीं।
- **पूंजी निर्माण में गिरावट** - उपभोक्ता के रूप में जीवन व्यतीत करने से (और उत्पादन में कुछ भी अंशदान न देने से) बेरोजगार व्यक्ति केवल उपभोग से ही वृद्धि करते हैं। वे निवेश के लिए कुछ भी आधिक्य का प्रजनन नहीं करते। इससे पूंजी निर्माण की दर की क्षति होती है।
- **कम उत्पादकता** - अदृश्य बेरोजगारी के फलस्वरूप उत्पादन का स्तर निम्न होता है। निम्न उत्पादकता का अर्थ है भावी विकास के लिए उत्पादन से कम आधिक्य की प्राप्ति।

निष्कर्ष : बेरोजगारी के आर्थिक परिणाम न केवल वर्तमान उत्पादन के निम्न स्तर व्यक्त करते हैं, बल्कि आगे निवेश के लिए कम आधिक्य के कारण भावी उत्पादन के कम स्तर को भी संकेत देते हैं।

सामाजिक परिणाम

- **जीवन की निम्न गुणवत्ता**- बेरोजगारी जीवन की गुणवता को कम कर देती है जिसका अर्थ है निरंतर वेदना की अवस्था।
- **अत्यधिक असमानता**- बेरोजगारी की मात्रा जितनी अधिक होगी, आय तथा सम्पत्ति के वितरण में असमानता की मात्रा भी अधिक होगी। ऐसी स्थिति में विकास सामाजिक न्याय के साथ होता है।
- **सामाजिक अशांति**- अशांति और आतंकवाद को कई अन्य तत्त्वों से प्रेरणा मिलती है परंतु बेरोजगारी एक कष्टप्रद भूमिका के रूप में अनदेखी नहीं की जा सकती।
- **वर्ग संघर्ष** - बेरोजगारी समाज को 'है' और नहीं 'है' में बांट देती है। इसके फलस्वरूप वर्ग संघर्ष जन्म लेता है जो सामाजिक अशांति को और भी बढ़ावा देती है।

निष्कर्ष : बेरोजगारी एक सामाजिक धमकी है जो सामाजिक न्याय को झुठलाती है और 'है' तथा 'नहीं है' के बीच अन्तर पैदा करके सामाजिक अशांति को बढ़ाती है।

बेरोजगारी दूर करने के उपाय

बेरोजगारी दूर करने के लिए निम्नलिखित उपाय किये जा सकते हैं-

- **उत्पादन में वृद्धि :** रोजगार को बढ़ावा देने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि देश में कृषि तथा औद्योगिक क्षेत्र के उत्पादन बढ़ाये जाये। साथ ही लघु तथा कुटीर उद्योगों के विकास को अधिक प्रोत्साहन दिया जाये।

विदेशी व्यापार, खनिज तथा बागानों के उत्पादन को बढ़ाया जाये। जितना उत्पादन अधिक होगा, उतनी ही श्रम की मांग में वृद्धि अधिक होगी।

- **पूंजी निर्माण की ऊँची दर :** रोजगार के अवसरों में वृद्धि लाने के लिए पूंजी निर्माण की दर को उच्च बनाने की आवश्यकता है। इससे विकास की गति तेज होगी और रोजगार भी बढ़ेगा।
- **छोटे और ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन :** बेरोजगारी पर अंकुश लगाने के लिए छोटे एवं ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। कुछ ऐसे उत्पादन क्षेत्र चुने जा सकते हैं जिनके सम्बन्ध में बड़े उद्योगों के उत्पादन पर आवश्यकतानुसार सीमा बांधी जा सकती है, ताकि भावी विस्तार छोटे उद्योगों के माध्यम से हो। कुछ उत्पादन क्षेत्र इनके लिए सुरक्षित भी रखे जा सकते हैं। सामान्यतया बड़े उद्योगों की तुलना में कम पूंजी से अधिक रोजगार और उत्पादन उपलब्ध कराते हैं।
- **स्वरोजगार में लगे लोगों का अधिक सहायता :** भारत में लगभग 62 प्रतिशत लोग स्वरोजगार में लगे हुए हैं। इनमें से अधिकतर लोग कृषि क्षेत्र में लगे हुए हैं। सरकार को लघु तथा सीमान्त किसानों को भूमि, सिंचाई, अच्छे बीज, खाद, यंत्र, साख आदि की सुविधाएं देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त शहरी क्षेत्रों में रहने वाले स्वयं रोजगार लोगों को साख, मार्केटिंग, कच्चे माल, टेक्निकल प्रशिक्षण कार्य आदि सुविधाएं देनी चाहिए।
- **शिक्षा प्रणाली में परिवर्तन :** शिक्षा को रोजगारमुखी बनाने के लिए वर्तमान शिक्षा प्रणाली को बदलने की आवश्यकता है। शिक्षा का आयोजन इस ढंग से होना चाहिए कि एक तो शिक्षा का कुछ भाग किसी काम के प्रशिक्षण के साथ जुड़ा हो, तथा शिक्षा प्राप्ति के बाद शिक्षित व्यक्ति अपने को किसी काम के योग्य पाएं। शुरू से ही शिक्षा प्रणाली में व्यावसायिक शिक्षा प्रणाली पर बल दिया जाना चाहिए।
- **औद्योगिक तकनीक में परिवर्तन :** रोज़गार में वृद्धि लाने के लिए ऐसी तकनीकों का चयन किया जाना चाहिए जो कुशल होने के साथ-साथ श्रम प्रधान भी हो, ताकि रोजगार के अवसर तेजी से बढ़ सके। ऐसे उद्योगों की स्थापना पर बल दिया जाना चाहिए जिनसे उत्पादन तुरंत आरंभ हो जाता है। आवश्यक उपभोक्ता पदार्थों के उद्योगों के विकास पर अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।
- **जनसंख्या पर नियंत्रण :** बेरोजगारी की समस्या का हल केवल रोजगार बढ़ाने से ही नहीं हो सकेगा, क्योंकि फिलहाल रोजगार की मात्रा में उस रफ्तार से वृद्धि लाना संभव नहीं जान पड़ता जिस रफ्तार से देश में श्रमिकों की मात्रा बढ़ रही है। इसलिए जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण आवश्यक है।

बेरोजगारी दूर करने के लिए सरकार द्वारा अपनाये गये कार्यक्रम

भारत सरकार ने बेरोजगारी दूर करने के लिए दो प्रकार के कार्यक्रम प्रारंभ किये हैं-एक स्वरोजगार आधारित कार्यक्रम तथा दूसरा मजदूरी आधारित कार्यक्रम। ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में बेरोजगारी को नियंत्रित करने के उद्देश्य से स्वनियोजन और मजदूरी नियोजन आधारित अनेक विशिष्ट कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं, जिनका विवरण इस प्रकार है-

- **जवाहर रोजगार योजना :** 28 अप्रैल, 1989 को प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने जवाहर रोजगार योजना शुरू करने की घोषणा की। राष्ट्रीय ग्राम रोजगार कार्यक्रम और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम को मिलाकर इस योजना के अधीन कर दिया गया है।

  जवाहर रोजगार योजना के लक्ष्य -

  प्राथमिक लक्ष्य -

  ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले बेरोजगार और अल्परोजगार पुरूषों एवं स्त्रियों के लिए लाभकारी रोजगार कायम करना।

  द्वितीयक लक्ष्य -

  (i) ग्रामीण अध: संरचना को मजबूत बनाकर स्थायी रोजगार कायम करना।

  (ii) सामुदायिक एवं सामाजिक परिसम्पतियों का निर्माण

  (iii) गरीबों के प्रत्यक्ष एवं निरंतर लाभ के लिए परिसम्पत्त का निर्माण करना।

  (iv) मजदूरी स्तर पर सकारात्मक प्रभाव डालना और

  (v) ग्राम क्षेत्रों में जीवन की गुणवत्ता में समग्र रूप से सुधार करना।

  जवाहर रोजगार योजना की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें रोजगार कार्यक्रमों को बनाने व चलाने का दायित्व पंचायतों को सौंपा गया था। अप्रैल 1999 में जवाहर रोजगार योजना को पुनर्गठित करके इसे जवाहर ग्राम समृद्धि योजना का नाम दिया गया।

- **रोजगार आश्वासन योजना :** 2 अक्टूबर, 1993 को 1,772 पिछड़े विकास खण्डों में आरंभ की गई थी। ये विकास खण्ड सूखा ग्रस्त, रेगिस्तानी, पहाड़ी और आदिवासी क्षेत्रों में थे। बाद में इस रोजगार कार्यक्रम का विस्तार सभी 5,448 ग्रामीण विकास खण्डों में किया गया। इस योजना का मुख्य उद्देश्य मजदूरी रोजगार की भारी कमी के समय गरीबी की रेखा के नीचे ग्रामीण गरीबों के लिए मजदूरी रोजगार के अतिरिक्त अवसर पैदा करना रहा है।

- **सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना :** जवाहर ग्राम समृद्धि योजना तथा रोजगार आश्वासन योजना को विलय करके 1 सितम्बर, 2001 को सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना का गठन किया गया। केन्द्र एवं राज्य सरकारें इस कार्यक्रम के लागत को 87.5:12.5 में वहन करती हैं। इस कार्यक्रम के उद्देश्य निम्न हैं-
  - ग्रामीण क्षेत्र में अतिरिक्त मजदूरी रोजगार की व्यवस्था करना।
  - सामुदायिक, सामाजिक और आर्थिक आधारिक संरचना का निर्माण करना।
  - इस कार्यक्रम को पंचायती राज संस्थाओं द्वारा लागू करने का प्रावधान है।

- **स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना :** इस योजना का आरंभ 1 दिसम्बर, 1997 को किया गया। इस योजना में शहरी बेरोजगारों को रोजगार प्रदान करने से सम्बन्धित दो योजनाओं - (i) नेहरू रोजगार योजना तथा (ii) प्रधानमंत्री समन्वित शहरी निर्धनता उन्मूलन प्रोग्राम को मिला दिया गया है। इस योजना का उद्देश्य शहरी बेरोजगार तथा अल्परोजगार वाले लोगों को स्वरोजगार अथवा मजदूरी रोजगार प्रदान करना है। इसके अंतर्गत दो विशिष्ट कार्यक्रम हैं - शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम और शहरी वेतन रोजगार कार्यक्रम। इस योजना का 75 प्रतिशत खर्च